Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:3(3), March 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

हिंदी कविता पर मार्क्सवाद का प्रभाव

डॉ0 जगदीश
असिस्टेंट, प्रो0 हिंदी
एस.एस.जे.राज.स्नातकोत्तर महाविद्यालय
स्याल्दे, अल्मोड़ा।
मो0 – 7060015298
Jcmanav84@gmail.com

शोध सारांश

हिंदी काव्य आदिकाल से लेकर वर्तमान तक अनेक–अनेक विचारों और तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों से हमेशा से ही प्रभावित रहा है। जिस से तत्कालीन साहित्य में देश काल और परिस्थिति का निश्चित तौर पर प्रभाव पड़ा है। आदिकालीन साहित्य में जहॉ एक तरफ राजाओं की प्रशंसा का काव्य लिखा गया वहीं दूसरी तरफ जैन और बौद्ध साहित्य लिखा गया। इसी दौरान विद्यापति, कीर्तिलता, कीर्तिपताका, और पदावली जैसी रचनाऐं रच रहे थे इस का कारण था कि तत्कालीन समाज का ताना–बाना भी ऐसा ही बुना हुआ था।

इस के तत्पश्चात भक्तिकाल का उदय होता है। तत्कालीन समाज राजा–महाराजाओं की प्रशंसा और नख शिख वर्णन से उब चुका था। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार **"इस समय भारत पर मुगलों का शासन स्थापित हो गया था निराश, हताश और त्राहिमाम जनता ईश्वर के शरण में जा चुकी थी। इस कारण भारत में भक्ति आंदोलन का प्रादुर्भाव हुआ।"**[1] भक्ति काल को मुख्य तौर पर दो भागों में बॉटा गया। 1–सगुण भक्ति काव्य और निर्गुण भक्तिकाव्य। सगुण भक्ति काव्य को भी दो धाराओं में बॉटा गया है। राम काव्य धारा और कृष्ण काव्यधारा। इस के अलावा निर्गुण भक्ति काव्य की भी भी दो धाराएं मानी जाती है। सन्त काव्यधारा और सूफी काव्यधारा।

भक्ति काल के बाद का दौर रीति काल का रहा है। रीति काल राज्याश्रय कवियों के दौर का काल रहा है। इस समय भी राजाओं के युद्ध का वर्णन और साथ ही स्त्री के नख शिख वर्णन का दौर भी रहा है। इस समय रीति के सिद्धांतों पर काव्य रचना पर भी जोर दिया गया। इस के साथ ही प्रेम और प्रकृति की कविताऐं भी लिखी गई। रीतिकाव्य के बाद का दौर हिंदी साहित्य में आधुनिक काव्य का दौर रहा है।

आधुनिक काव्य का प्रथम युग भारतेन्दु युग का है इस के बाद क्रमशः द्विवेदी युग, छायावाद, और तत्पश्चात प्रगतिवाद का दौर रहा है। सर्वप्रथम प्रगतिवादी हिंदी कविता पर मार्क्सवाद का प्रभाव पड़ा। मार्क्सवाद दार्शनिक, राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक विचारों की एक पद्यति है। जिस के प्रस्तोता कार्ल मार्क्स (1818-1883 ई0) हैं। इस के अलावा फ्रेडरिक एंगेल्स, माओत्से तुंग ने इसे व्यावहारिक रूप से विकसित और समृद्ध किया। कार्ल मार्क्स का लेखन एक सम्पूर्ण दर्शन पद्दति है। जिस के तीन अनिवार्य घटक हैं– द्वंदात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद, राजनीतिक अर्थशास्त्र, तथा वैज्ञानिक समाजवाद। मार्क्स ने समाज की वैज्ञानिक ढंग से व्याख्या ही नहीं की अपितु उसे बदलने की शर्तो उपायों और साधनों की की भी व्याख्या की। उन्होंने सचेत किया कि अब तक के दार्शनिक सृष्टि की केवल व्याख्या करते रहे हैं, परन्तु जरूरत इसे बदलने की है। मार्क्वाद के अनुसार अब तक समाज में चार प्रकार की सामाजिक अवस्थाऍं प्राप्त हो सकी हैं। पहली व्यवस्था है आदिम साम्यवाद की जिस में लोग स्वत्रंत्र थे जंगल में पशुओं की तरह रहते थे, व्यक्तिगत संपत्ति नहीं थी जो शोषण का आधार है। दूसरी अवस्था है दास प्रथा। इस के अंतर्गत कुछ शक्ति सम्पन्न व्यक्ति शक्तिहीनों पर शासन करते थे, किंतु जब कुछ दासों ने क्रांति की तो सामंतवादी व्यवस्था ने उसका स्थान ले लिया। सामंती व्यवस्था में भी जब वर्ग संघर्ष आरंभ हो गया तो उस का स्थान एक नई विकसित आर्थिक व्यवस्था ने ले लिया जो आज भी जीवित है। जिसे पूॅजीवाद कहते हैं। किंतु पूॅजीवाद में भी वर्ग संघर्ष चल रहा है, और उस के स्थान पर समाजवाद का आना अनिवार्य है।

आगे की वस्तुतः दो मंजिलें है समाजवाद और साम्यवाद की। समाजवाद और साम्यवाद में आर्थिक तथा सामाजिक परिपक्वता के मामले में अंतर होता है। दोनों शोषण से मुक्त लोगों के पारस्परिक सहयोग के संबंधों पर आधारित हैं। समाजवाद के गठन के दौरान पूंजीवादी संपत्तियों के हस्तान्तरण तथा किसानों और कारीगरों के सहकारीकरण के जरिए सामाजिक संपत्ति का निर्माण होता है। समाजवाद के अंतर्गत नगर तथा देहात के बीच

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:3(3), March 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

उत्पन्न ऐतिहासिक अंतर्विरोधों को खत्म कर दिया जाता है। इस के विपरीत साम्यवाद की स्थिति में उत्पादन के साधनों पर पूरी जनता का एक समान स्वामित्व स्थापित हो जाएगा। वर्ग भेद लुप्त हो जाऐंगे तथा नगर और देहातों के बीच, मानसिक और शारीरिक श्रम के बीच सारभूत अंतर खत्म कर दिया जाएगा। उस स्थिति में श्रम प्रत्येक की पहली आवश्यकता बन जाएगा। भारत में मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित एवं फ्रॉस की 'प्रोगेसिव राइटर्स एसोशिएसन' से प्रेरित हो कर 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना हुई। 1936 में मुंशी प्रेमचंद ने इस के अध्यक्षीय भाषण में कहा था कि– अब सौन्दर्य केवल सुंदर स्त्री के लिपिस्टिक लगे होठों में ही नहीं देखना होगा अपितु अपने बच्चे को खेत के मेड़ पर सुलाकर काम करने वाली युवती के पपड़ी पडें होठों में भी सौन्दर्य देखना होगा। साहित्य में प्रगति और प्रयोग की एक लंबी परंपरा दिखाई पड़ती है। किन्तु मुख्यतः यह आधुनिक काल की देन है। व्यापक अर्थ में इन्हें भारतेन्दु हरिश्चंद्र की रचनाओं में देखा जा सकता है। उन्होंने अंग्रेजी साम्राज्य की लूट और शोषण के विरूद्ध आवाज उठाई। इस प्रकार कहा जा सकता है कि हिंदी साहित्य पर हर काल में समाज की विचारधाराओं का असर पड़ा है। प्रस्तुत शोध पत्र में हिंदी कविता पर मार्क्सवाद के प्रभाव का अध्ययन किया जाएगा।

शब्द कुंजी– प्रोगेसिव राइटर्स एसोशिएसन, साम्यवाद, समाजवाद, द्वंदात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद, प्रगतिवाद, मार्क्सवाद, कम्युनिज्म।

भूमिका– कहा गया कि राजनीति के क्षेत्र का मार्क्सवाद साहित्य के क्षेत्र का प्रगतिवाद है। प्रगतिवादी काव्य की संज्ञा उस काव्य को दी गई जो छायावाद के समाप्तिकाल में 1936 के आसपास से सामाजिक चेतना को ले कर निर्मित होना आरंभ हुआ। प्रगतिवादी काव्यधारा वह काव्यधारा है जो मार्क्सवादी दर्शन के आलोक में सामाजिक चेतना और भावाबोध को अपना लक्ष्य बना कर चली। एक ओर भारतीय समाज में उभरता हुआ जनसंकट था तो दूसरी ओर रूस में मार्क्सवादी दर्शन के आधार पर स्थापित साम्यवाद था, जो वहॉ के विषम संकट और संघर्ष से गुजरे जनजीवन को बल दे रहा था और जो सामंतवाद और पूँजीवाद की विभीषिकाओं को कुचलकर कर सर्वहारा का अधिनायकत्व स्थापित कर रहा था। भारतीय बुद्धिजीवी एक ओर अपने समाज में उत्पन्न अनेक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक विसंगतियों और संकटों को देख रहा था। दूसरी और वह रूसी समाज को देख रहा था, जो इन विसंगतियों और संकटों से गुजरकर एक एक ऐसी व्यवस्था स्थापित कर रहा था जिस में सामान्य जनजीवन को महत्ता प्राप्त हो रही थी तथा नए सुख–सुविधाओं की प्रतिष्ठा हो रही थी। रूस में प्रतिष्ठित साम्यवाद और पश्चिम के अन्य देशों में फैलता हुआ उसका मार्क्सवादी दर्शन भारतीय बुद्धिजीवियों के लिए प्रेरणा–केन्द्र बन रहा था। इधर देश की परिस्थिति विषम हो रही थी और उस विषम परिस्थिति में युवकों का हृदय असंतोष और विद्रोह से कसमसा रहा था। देश की अवस्था प्रगतिवादी विश्वासों और स्वरों के लिए उपयुक्त भूमि बन रही थी।[2] जगती हुई उग्र जन–चेतना, रूस में स्थापित समाजवाद तथा पश्चिम के अन्य देशों में प्रचारित कम्युनिज्म के सिद्धॉतों से उभरते हुए विश्वव्यापी प्रभाव के कारण भारत में 1935 के आसपास साम्यवादी आंदोलन उगने लगा था। साहित्य भी उस से प्रभावित हुआ और प्रगतिवादी साहित्य का आंदोलन आरंभ हुआ। सन् 1935 में ई. एम. फार्स्टर के सभापतित्व में पेरिस में **'प्रोगेसिव राइटर्स एसोसिएशन'** नामक अंतर्राष्ट्रीय संस्था का प्रथम अधिवेशन हुआ। सन् 1936 में सज्जाद जहीर और डॉ0 मुल्कराज आनंद के प्रयत्नों से भारतवर्ष में भी इस संस्था की शाखा खुली और प्रेमचंद की अध्यक्षता में लखनऊ में इसका प्रथम अधिवेशन हुआ।[3] प्रेमचंद के भाषण में 'प्रगतिवाद' शब्द का का प्रयोग नहीं हुआ और न हीं उन्होंने मार्क्सवादी काव्य–सिद्धांतों की ही चर्चा की है। परन्तु उन्होंने स्पष्ट बताया कि साहित्य उपयोगितावादी होना चाहिए। ''जो दलित हैं, पीड़ित हैं, वंचित हैं– चाहे वह व्यक्ति हो सा समूह उसकी हिमायत करना उसका फर्ज है।''[4] 'मार्क्सवादी साहित्यिक सिद्धान्तों की सर्वप्रथम चर्चा विशाल भारत (मार्च 37) में प्रकाशित शिवदान सिंह चौहान के एक लेख 'भारत में प्रगतिशील साहित्य की आवश्यकता' में हुई। लेकिन प्रगतिवाद शब्द वहॉ भी गायब है। '1938' के 'प्रगतिशील लेखक संघ' के घोषणा पत्र में भी इसका उल्लेख नहीं मिलता। सन् '1938' के 'रूपाभ' में भी जो मुख्यतः प्रगतिशील विचारधारा का ही पत्र था। 'प्रगतिवाद' शब्द नहीं प्रयुक्त हुआ है। वस्तुतः इस का प्रयोग '1940' के बाद ही हुआ। 'प्रगतिशील' और 'प्रगतिवाद' में अंतर है। प्रगतिशील विशेषण है जो अपने विशेष्य के साथ रहकर भी अर्थवान होता है। पर 'प्रगतिवाद' संज्ञा है अवधारणा है। 'प्रगतिशीलता' में लघुता के प्रति संवेदनात्मक रूझान होता है। तो प्रगतिवाद में मार्क्सवादी अवधारणा का अनुबंध यानी आधार–अधिरचना का द्वन्द्वात्मक सम्बन्ध, वर्ग–संघर्ष और सर्वहारा की पक्षधरता।''[5] आइए अब इस पर विस्तार से बात करते हैं।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:3(3), March 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

प्रगतिवाद रचना और आलोचना के क्षेत्र में सर्वथा नवीन दृष्टिकोण ले कर आया। यह सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति को ही रचना का उद्देश्य मानता है। प्रगतिवादी साहित्य अनिवार्य रूप से किसानों और मजदूरों के संघर्ष को रूपायित कर उसे बल प्रदान करता है। तथा पूँजीवादी और सामंतवादी शक्तियों की शोषक, स्वार्थी, स्वकेन्द्रित जर्जर, विसंगतिमय प्रवृत्तियों पर चोट करता है। प्रगतिवाद ने सौन्दर्य को नए दृष्टिकोण से देखा। वह वर्तमान जनजीवन में सौंदर्य देखता है। प्रतिवादी साहित्य को सोद्देश्य मानता है। सोद्देश्यता का अर्थ है किसी विशेष अभिप्राय से, किसी विशेष दृष्टि से कला की रचना करना। प्रसिद्ध मार्क्सवादी दार्शनिक एन. जी. चरनीशवस्की के शब्दों में मनुष्य को जीवन सब से प्यारा है, इसलिए सौंदर्य की यह परिभाषा अत्यंत संतोषजनक मालूम पड़ती है : 'सौंदर्य जीवन है'।[6] प्रगतिवाद ने हिंदी–काव्यधारा के विकास में एक बहुत ही महत्वपूर्ण अध्याय जोड़ा उसने काव्य को व्यक्तिवादी यथार्थ के बंद कमरे से निकालकर जनजीवन के बीच प्रवाहित कर दिया। जीवन और साहित्य के मूल्य, सौंदर्यबोध और लक्ष्य को समाज के यथार्थ और उसकी रचना से जोड़ा, भाषा को कुहरे से निकालकर धरातल पर प्रतिष्ठित किया। केदारनाथ अग्रवाल, रामविलास शर्मा, नागार्जुन, रांगेय राघव, शिवमंगलसिंह सुमन, त्रिलोचन एवं मुक्तिबोध इस धारा के प्रमुख कवि हैं।

तार सप्तक '1943' में संगृहीत चार कवियों ने अपने को घोषित रूप से मार्क्वादी कहा । इस धारा को रोकने का भी प्रयास कम नहीं हुआ। 'विशाल भारत' ने जमकर इस का विरोध किया। 1938–39 में अज्ञेय 'विशाल भारत' के संपादक नियुक्त हुए तो इस विरोध में और भी तेजी आई। अज्ञेय ने इसे कम्युनिष्ट पार्टी से संबद्ध कर के एक संकीर्णतावादी आंदोलन की संज्ञा दी और प्रगतिशील लेखक संघ को साम्यवादी साहित्यिक संघ कहा। इलाचंद्र जोशी ने भी इस मंच से प्रगतिशील लेखक संघ पर हमला करते हुए चिरंतर सत्यों की खोज में हुए फ्रायडवाद की मंजिल तक जा पहुँचे। सन् 1942 में दूसरे महायुद्ध के दौरान कम्युनिष्ट पार्टी ने रूस के समर्थन में फासीवाद का विरोध करने के लिए कई और मोर्चे खोले। भारतीय जननाट्य संघ (इप्टा) की स्थापना 1943 में हुई। शंभूमित्र, उत्पलदत्त, बलरास साहनी, हबीब तनवीर, दुर्गा खोटे, जोहरा सहगल, आदि इस के रंगकर्मी थे। इन्होंने फासीवाद के विरोध में देश भर में जगह–जगह पर प्रभावशाली नाटक खेले। इसी दौरान भारत में अंग्रेजी साम्राज्य के विरूद्ध जो लहर दौड़ी कम्युनिष्ट पार्टी ने उस का साथ नहीं दिया। फलस्वरूप वह देश की मुख्य धारा से कट गई। प्रगतिशील लेखक संघ का भी यही हाल हुआ। स्वयं संघ में संकीर्णतावादी और उदारवादी दो दल हो गए और 1959 तक आते–आते इस में विखराव आ गया। प्रयोगवादियों ने इस स्थिति का लाभ उठाकर प्रयोगवादी आंदोलन को तेज कर दिया।[7]

तमाम उतार–चढ़ाव और प्रतिरोध के बावजूद स्पष्ट है कि हिंदी की प्रगतिवादी काव्यधारा पर मार्क्सवाद का प्रभाव है। अतः प्रगतिवादी कविता ही मार्क्सवादी कविता है। इस कविता का अपना महत्व है, यह कविता गरीबों, मजदूरों आदि की मुखर आवाज है। प्रमुख प्रगतिवादी (मार्क्सवादी) कवि और उन की कविताएं इस प्रकार हैं।

नागार्जुन– इनका घरेलू नाम वैद्यनाथ मिश्र है। वे यात्री उपनाम से मैथिली में कविताऐं लिखा करते थे। ये कोरे लेखक नहीं हैं। इन्होंने राजनीतिक आंदोलनों में शरीक होकर जेल यात्राऐं भी की हैं। नागार्जुन की कविता पर मार्क्सवाद का सीधा प्रभाव दिखता है। इनकी कविता में शोषित, पीड़ित, सर्वहारा और किसानों की पक्षधरता स्पष्ट दिखाई देती है। नागार्जुन गरीब निम्नमध्यमवर्गीय परिवार में पैदा हुए थे। उन्होंने अपने चारों ओर गरीबी, अपमान, दैन्य, विषमता, में तड़पते हुए किसानों, मजदूरों को देखा था । अतः इस के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों, सरमायादारों, संस्थानों और सरकारों पर जम कर प्रहार किया है। अतः अमन या शांति की कविता न लिखना उनकी विवशता है –

''कैसे लिखूँ शांति की कविता,
अमन–चैन को कैसे कड़ियों में बाँधूँ,
मैं दरिद्र हूँ, पुश्त–पुश्त की यह दरिद्रता
कटहल के छिलके जैसी खुरदरी जीभ से
मेरा लहू चाटते आई
मैं न अकेला.....
मुझ जैसे तो लाख–लाख हैं, कोटि–कोटि हैं।''[8]

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:3(3), March 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

जनपद के हृदय की घड़कन, चाहे गॉव के पाठशाले का चित्र हो, चाहे अकाल का, जहॉ कहीं भी मिलती है वहॉ कविता संवेदना के स्तर पर पहुँच जाती है। इस में बस्तुनिष्ठ समीकरण का जो विन्यास दिखाई पड़ता है वह यथार्थ का जीवंत चित्र प्रस्तुत करने के साथ–साथ व्यवस्था पर भी चोट करने में नहीं चूकता–

''घुन खाए शहतीरों पर बारहखड़ी विधाता बॉचे
फटी भीत है, छत चूती है, आले पर बिसतुइया नाचे
बरसा कर बेबस बच्चों पर मिनट–मिनट में पॉच तमाचे
इसी तरह दुखरन मास्टर गढ़ता है आदम के सॉचे।'' [9]

इस तरह यह स्पष्ट है कि नागार्जुन के काव्य में मार्क्सवादी विचारों का प्रभाव है।

केदारनाथ अग्रवाल– केदार नाथ अग्रवाल को प्रगतिवाद का सुमित्रानंदन पंत कहा जाता है। पंत पर पहाड़ी प्रकृति का काल्पनिक रंग है तो केदार पर गांव की प्रकृति का यथार्थवादी रंग। केदार की कविताओं में मानव और प्रकृति के सौंदर्य का बड़ा सहज, वेगवान और उन्मुक्त रूप मिलता है। केदार की प्रगतिशीलता सहज सौंदर्यवादी कविताओं के रूप में देखी जा सकती है।

''आज नदी बिलकुल उदास थी
सोई थी अपने पानी में,
उसके दर्पण पर
बादल का वस्त्र पड़ा था
मैंने उसको नहीं जगाया
दबे पॉव वापस घर आया।'' [10]

केदारनाथ अग्रवाल की एक और प्रगतिवादी कविता इस प्रकार है।

काटो, काटो, काटो, करबी
मारो, मारो, मारो, हॅसिया
हिंसा और अहिंसा क्या है
जीवन से बढ़ हिंसा क्या है। [11]

प्रकृतिवादी कवि होने के वावजूद केदरनाथ अग्रवाल की कविताओं पर मार्क्सवाद का प्रभाव परिलक्षित होता है।

शिवमंगलसिंह सुमन – शिवमंगल सिंह सुमन की कविताओं में शोषित वर्ग की हिमायत और पूँजीवादी वर्ग की खिलाफत अभिव्यक्त हुई है। इनकी प्रगतिवादी रचनाऐं हैं – 'कलकत्ते का अकाल', 'गुनिया का सौवन', और चल रही कुदाली। शिवमंगल सिंह सुमन की कविताओं में मार्क्सवादी विचार परिलक्षित होते हैं। इनकी कुछ प्रमुख कविताऐं निम्न हैं।

हाय यहॉ मानव–मानव में समता का व्यवहार नहीं हैं,
हाहाकारों की दुनिया में सपनों का संसार नहीं है।
इसीलिए अपने सपनों को मुट्ठी में मलता जाता हूँ।

* * *

जगे वीर, जागी वसुन्धरा, जागी युग की ज्वाला
यहॉ लुटेरे फासिस्तों को पड़ा मौत से पाला
जन–जन जागे, कण–कण जागा, जागा लाल सितारा
चली लाल सेना लहराली, लाल रक्त की धारा
कौन लड़ेगा ? कौन बढ़ेगा ? कौन साहसी शूर है
दस हफ्ते दस साल बन गए, मास्को अब भी दूर है। [12]

इन कविताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि शिवमंगल सिंह सुमन की कविताओं में मार्क्सवाद का प्रभाव है।

त्रिलोचन शास्त्री– त्रिलोचन को भी प्रगतिवादी कवियों में गिना जाता है। 'मिट्टी की बारात' इनकी प्रमुख कृति है। इनकी कविताओं में बड़ी सादगी है और हर कविता में धरती की सौंधी गंध मिलती है। ये कविताएं प्रायः आकर में छोटी और प्रभाव में तीव्र होती हैं।[13] वैसे तो त्रिलोचन ने खुद को प्रगतिवादी नारों से बचाया है। फिर भी कुछ कविताओं में इनका समावेश हो ही गया है। त्रिलोचन का प्रगतिवाद त्रासदीय जीवन बोध (ट्रेजिक सेंस ऑफ लाइफ) में है। यह

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:3(3), March 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

बोध उसे सैद्धांतिक स्तर पर नहीं मिला है, बल्कि जीवन के लघु प्रसंगों से प्राप्त हुआ है। जिसे उसने देखा, सुना और भोगा है। उनकी एक ऐसी ही कविता है 'चम्पा काले–काले अक्सर नहीं चीन्हती' जो प्रगतिवादी कविता है और जिस में मार्क्सवाद का प्रभाव भी दिखता है।

''चम्पा, पढ़ लेना अच्छा है
चम्पा बोलो–तुम कितने झूठे हो
राम, राम, तुम–पढ़ लिखकर इतने झूठे हो
मैं तो ब्याह कभी न करूँगी
और कहीं जो ब्याह को गया
तो मैं अपने बालम को संग–साथ रखूँगी
कलकत्ता मैं कभी न जाने दूँगी
कलकत्ते पर बजरगिरे।''[14]

यह कविता पढ़े लिखे लोगों पर व्यंग्य तो है ही साथ ही इस पूँजीवादी व्यवस्था पर प्रहार भी है जिस में चम्पा अनपे बालम को कलकत्ता जाने से रोक रही है। इस प्रकार यहाँ भी यह कहा जा सकता है कि त्रिलोचन की कविताओं पर भी प्रगतिवाद का असर दिखाई देता है। जो कि कहीं न कहीं चाहे कम ही सही मार्क्सवाद का भी प्रभाव माना जा सकता है।

निष्कर्ष – कहा जा सकता है कि हिंदी कविता पर तत्कालीन सामाजिक, राजनीति, एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का प्रभाव रहा है। चाहे वह वीरगाथा काल, भक्ति काल, रीतिकाल एवं आधुनिक काल ही क्यों न हो। इसी प्रकार भारतीय राजनीति एवं समाज में मार्क्सवाद के प्रभाव का सीधा असर हिंदी कविता पर भी पड़ा। हिंदी प्रगतिवादी कविता में यह प्रमुख रूप से मुखरित हुआ है। इसी कारण हिंदी प्रगतिवादी कविता को मार्क्सवादी कविता के नाम से भी जाना जाता है। इसे साथ ही हिंदी में मार्क्सवादी आलोचना का भी उद्भव हुआ। जिस में हिंदी कविता का मूल्यॉकन मार्क्सवाद के विचारों के आधार पर किया गया।

संदर्भ सूची

1– हिंदी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचंद्र शुक्ल पृ0 60।
2– हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ0 नगेन्द्र, डॉ0 हरदयाल – पृ0 606।
3– हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ0 नगेन्द्र, डॉ0 हरदयाल – पृ0 607।
4– आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास– बच्चन सिंह पृ0 246।
5– आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास– बच्चन सिंह पृ0 246।
6– हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ0 नगेन्द्र, डॉ0 हरदयाल – पृ0 607।
7– आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास– बच्चन सिंह पृ0 246।
8– आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास– बच्चन सिंह पृ0 249।
9– आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास– बच्चन सिंह पृ0 249।
10– हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ0 नगेन्द्र, डॉ0 हरदयाल – पृ0 609।
11– आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास– बच्चन सिंह पृ0 252।
12– आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास– बच्चन सिंह पृ0 254।
13– हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ0 नगेन्द्र, डॉ0 हरदयाल – पृ0 610।
14– आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास– बच्चन सिंह पृ0 255।